भगवान सिंह व अन्य

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

23 जनवरी, 2003

(एस.राजेंद्र बाबू, डी. एम. धर्माधिकारी व जी.पी. माथुर, जेजे.)

आपराधिक मुकदमाः

बालक गवाह की गवाही विश्वसनीयता अभियोजन पक्ष का मामला कि वह बालक हत्या का चश्मदीद गवाह था। विचारण न्यायालय ने कुछ चूक के कारण बच्चे के कथनों को खारिज कर दिया, उच्च न्यायालय ने गवाही पर भरोसा करते हुए आरोपी को दोषी ठहराया अपील में निर्धारित किया कि चूंकि बाल गवाह की गवाही कमजोरियों से ग्रस्त है, इसलिए आरोपी को दोषी ठहराने के लिए बाल गवाह के साक्ष्य अविश्वसनीय हैं। दंड संहिता, 1860 धारा 302. पहचान परेड का परीक्षण आवश्यकता विचार किया गया

दंड प्रक्रिया संहिता 1973 ;

धारा 164 और 313 अतिरिक्त न्यायिक संस्वीकृति विश्वसनीयता निर्धारित किया कि जब न्यायिक संस्वीकृति स्वेच्छा से नहीं दी जाती है और इससे भी अधिक जब इसे वापस ले लिया जाता है तो यह

अविश्वसनीय होती है।

धारा 368 दोषमुक्ति के विरूद्ध अपील उच्च न्यायालय द्वारा सबूतों की पुनः अभिमुल्यांकन किया गया और दोषमुक्ति को अपास्त किया औचित्यता निर्धारित किया किए विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य का तथ्यों पर अभिमूल्यांकन उचित और निर्धारित निष्कर्ष उचित। अतः उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति का आदेश अपास्त किया जाना न्यायोचित नही।

एम.पी. (डकैती विहावरण क्षेत्र) अधिनियम, 1981 धारा 11/13 प्रयोज्यता निर्धारित किया कि घटना गांव में हुई जो डकैती प्रभावित क्षेत्र के अंतर्गत आता है । अतः अधिनियम के प्रावधान लागू हैं।

अभियोजन पक्ष के अनुसार, अपीलकर्ता संख्या 1 ने अन्य अपीलकर्ताओं और सह-अभियुक्तों की मदद से एम को मारने की योजना बनाई। वे आधी रात को एम के घर में घुसे और उसे मारने के बाद फांसी पर लटका दिया और उसकी बेटी को भी मार डाला। घटना के समय एम के घर एम की पुत्री का पुत्र जिसकी उम्र लगभग छह साल थी, अपने छोटे भाइयों के साथ सो रहा था और घटना का साक्षी रहा। यह आरोप लगाया गया है कि अपराध का हेतुक अपीलकर्ता संख्या 1 और एम के बीच अदालत में लंबित एक दीवानी विवाद था। अभियुक्तों पर अपराध अन्तर्गत धारा 302/34, 396, 460, 404 आईपीसी और धारा 11ध/13 एम.पी. (डकैती विहावरण क्षेत्र) अधिनियम, 1981 के आरोप लगाए गए थे।

विचारण न्यायालय ने उन्हें दोषमुक्त किया। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ताओं को दोषसिद्ध किया और सह. अभियुक्तों को दोषमुक्त किया। अतः अपील प्रस्तुत की।

अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि बाल गवाह के चश्मदीद गवाह और दर्ज किए गए सह- अभियुक्तों की न्यायिक स्वीकारोक्ति अविश्वसनीय थी और विचारण न्यायालय द्वारा सही तौर पर खारिज किया गया और उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निर्णय को अपास्त करने और ऐसे कमजोर सबूतों पर आरोपियों को दोषी ठहराने के लिए कोई उचित और तर्क संगत कारण नहीं दिया है।

न्यायालय द्वारा अपील की अनुमति देते हुए, अभिनिर्धारित किया गया :-

1.1 विधि बालक को एक सक्षम गवाह के रूप में मान्यता देता है, लेकिन एक बच्चा, विशेष रूप से छह साल की नाजुक उम्र में, जो समझ की अपरिपक्वता के कारण घटना की प्रकृति के बारे में उचित राय बनाने में असमर्थ है, उसे अदालत द्वारा गवाह के साथ में नहीं माना जायेगा जिसकी एकमात्र गवाही पर अन्य पुष्ट साक्ष्यों के बिना भरोसा किया जा सके। बच्चे के साक्ष्य का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना आवश्यक है क्योंकि वह सिखाने का आसान शिकार है। इसलिए, न्यायालय हमेशा उसकी गवाही के लिए अन्य सबूतों से पर्याप्त पुष्टि को देखती है। (516-

डी,ई)

पंछी और अन्य बनाम यूपी राज्य, (1998) 7 एससीसी 177 और असम राज्य बनाम मफीजुद्दीन अहमद, (1983) 2 एससीसी 14, संदर्भित।

1.2. हस्तगत प्रकरण में, हालांकि बाल गवाह ने सीआरपीसी की धारा 161 के तहत अपने बयान में आरोपियों का नाम लिया था, लेकिन आरोपियों को उसके बाद शीघ्र गिरफ्तार नहीं किया गया। रिकॉर्ड में इस विलम्ब का कोई स्पष्टीकरण नहीं है और कोई परीक्षण पहचान परेड भी आयोजित नहीं की गई थी। जब बालक कटघरे में था तब बच्चे ने अदालत में उनकी पहचान की थी और इस पहचान को विश्वसनीय पहचान के रूप में निश्चित रूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता है। घटना के बाद, बच्चे ने सबसे पहले अपने मामा से मिला था, जो बतौर गवाह परीक्षित नहीं हुआ था और अभियोजन पक्ष ने इसके लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया। इसके अलावा बच्चे के पिता ने अपने बयान में यह प्रकट नहीं किया कि घटना के बाद बच्चे ने उन्हें हमलावरों के बारे में बताया था जो कि अप्राकृतिक है। विचारण न्यायालय ने बच्चे की भाव-भंगिमाआेंं को दर्ज किया। बच्चा अपनी गवाही के दौरान हिचकिचा रहा था। बाल मनोविज्ञान को ध्यान में रखते हुए बालक ने अपनी माँ पर ज्ञात व्यक्तियों द्वारा हमला होते देख बच्चे ने शोर मचा दिया होगाय लेकिन वह कहता है कि वह चुपचाप सोने चला गया और जब उसके मामा उसे लेने आये तब वह सुबह

देरी से उठा। इसके अलावा, छह साल की उम्र के बच्चे से, बयान में पूर्ण स्थिरता की उम्मीद नहीं की जा सकती है, लेकिन, बच्चे के गवाह के साक्ष्य गंभीर दुर्बलता से ग्रस्त हैं और दोषसिद्धि के आधार बनाने के लिए उसके साक्ष्य को अत्यधिक अविश्वसनीय बनाते हैं।(516-एफ,जी,एच(517-ए,जी(516-सी)

जपल सिंह बनाम पंजाब राज्य, (1996) 4 अपराध 74 (एससी), संदर्भित।

1.4. उच्च न्यायालय का यह मानना कि चूंकि आरोपी पहले से ही बच्चे को जानता था, इसलिए परीक्षण पहचान परेड आयोजित करना आवश्यक नहीं था, असंब) है। घटना के समय बच्चे की उम्र छह साल थी। वह अपने पिता और माँ के साथ रहता था। कुछ गवाहों ने कहा है कि वह अपनी मां और छोटे भाइयों के साथ अपने दादा के पास आता जाता रहता था। उसकी उम्र और समझ को देखते हुए, भले ही उसने पड़ोस में रहने वाले अपीलकर्ता नंबर एक को पहचान लिया हो, लेकिन यह बहुत अस्वाभाविक है कि वह अन्य दो आरोपियों को जानता होगा जो मुश्किल से उसी गांव के निवासी थे। इसलिए, विचारण न्यायाधीश द्वारा ली गई गवाही के विपरीत बाल गवाह की गवाही पर विचार करना और आरोपी को दोषी ठहराने के लिए उस पर भरोसा करना उच्च न्यायालय के लिए अनुचित था। (518-सी, डी, ई)

2.1. स्वेच्छा से नहीं दी गई न्यायिक अभिस्वीकृति तब और अधिक अविश्वसनीय होती है जब ऐसी संस्वीकृति वापस ले ली जाती है। ऐसे न्यायिक स्वीकारोक्ति पर विश्वास करना या यहां तक कि इसे प्रकरण में साक्ष्य के एक पुष्टिकारक टुकड़े के रूप में भी सुरक्षित नहीं है। जब एक न्यायिक संस्वीकृति स्वैच्छिक नहीं पाई जाती है और इससे भी अधिक जब इसे वापस ले लिया जाता है, तो अन्य विश्वसनीय सबूतों के अभाव में, ऐसे वापस लिए गए न्यायिक संस्वीकृति के आधार पर दोषसिद्धि नहीं की जा सकती है। शंकरिया बनाम राजस्थान राज्य, (1978) 3 एससीसी 435, संदर्भित। (518-सी, डी)

2.2. धारा 164 सीआरपीसी की आवश्यकता के अनुसार, न्यायिक मजिस्ट्रेट को अभियोजन एजेंसी द्वारा जबरन बयान लेने से रोकने की आवश्यकता है। मजिस्ट्रेट को विशेष रूप से आरोपी से पूछना चाहिए वह ऐसा बयान क्यों देना चाहता है जो निश्चित रूप से मुकदमे में उसके हित के खिलाफ जाएगा। उसे विचार करने के लिए पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए और किसी भी प्रकार की आशंका वाली यातना या पुलिस के दबाव से सुरक्षा का आश्वासन दिया जाना चाहिए, यदि वह संस्वीकृति वाला बयान देने से इनकार करता है। (519-ई,एफ)

यूपी राज्य बनाम सिंघरा सिंह, एआईआर (1964) एससी 358 और शिवप्पा बनाम कर्नाटक राज्य (1995) 2 एससीसी 76, संदर्भित

2.3. मौजूदा मामले में दोषमुक्त किए गए आरोपी का अतिरिक्त न्यायिक संस्वीकृति का कथन न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा दर्ज किया गया था जब उसे पुलिस हिरासत में उसके सामने हाथ में हथकड़ी पहनाकर पेश किया गया था। गवाही में मजिस्ट्रेट का कहना है कि उन्होंने अभियुक्त से पूछताछ की और बाद में पुष्टि की कि वह बिना किसी दबाव के स्वेच्छा से बयान दे रहा था। लेकिन संस्वीकृति के रिकॉर्ड से यह नहीं पता चलता है कि आरोपी से कोई विशेष सवाल पूछे गए थे कि क्या जांच एजेंसी द्वारा उस पर कोई शारीरिक या मानसिक दबाव डाला गया था। स्वीकारोक्ति को प्रश्न और उत्तर के रूप में भी दर्ज नहीं किया गया, जैसा कि दाण्डिक न्यायालय नियमों में दर्शाया गया है। अभियुक्त द्वारा विचारण न्यायाधीश के समक्ष लिखित रूप में अपना स्वीकारोक्ति के बयान वापस ले लिया गया था, जहां उसने प्रकट किया था कि उसे यह कहकर न्यायिक बयान के लिए पेश किया गया था कि वह एक सरकारी गवाह के रूप में अभियोजन पक्ष का गवाह होगा। उन्होंने यह भी बयान दिया कि झूठी स्वीकारोक्ति देने के लिए राजी होने के लिए पुलिस ने उन्हें शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया और धमकाया। यह भी कहा गया है कि पुलिस ने उससे जेल में मिली थी और एक बयान पर उनके हस्ताक्षर लिए गए थे। स्वीकारोक्ति से ठीक पहले आरोपी पुलिस की हिरासत में था। ये सभी परिस्थितियाँ स्वीकारोक्ति के अनैच्छिक होने पर अविश्वसनीय होने की मुहर लगाने के लिए पर्याप्त हैं। अतः अविश्वसनीय है (518-जी,एच ; 519-ए,डी)

3. न तो बाल गवाह की एकमात्र गवाही और न ही अतिरिक्त न्यायिक स्वीकारोक्ति निर्णायक रूप से तीन आरोपियों की संलिप्तता और अपराध को साबित करती है। इन परिस्थितियों में, मृतक की कुछ वस्तुओं की बरामदगी के साक्ष्य, जो बहुत सामान्य वस्तुएं जो अधिक मूल की नहीं हैं, जिनके बारे में आरोप लगाया जाता है कि उन्हें आरोपी ने चुरा लिया था, आरोपी की सजा को बनाए रखने के लिए बहुत कमजोर सबूत का भाग है। आरोपियों के खिलाफ कुछ कृत्रिम साक्ष्य गढ़ने का भी प्रयास किया गया। अभियोजन पक्ष ने अपीलकर्ताओं को अपराध में शामिल करने की कोशिश की है और गवाहों द्वारा हत्या की योजना को सुनने और योजना के पूरा होने के बाद इसके बारे में खुले तौर पर चर्चा करने के झूठे सबूत गढ़कर अपने काम की इतिश्री कर ली है। यह विचारण न्यायालय उच्च न्यायालय द्वारा इन सबूतों पर विश्वास नहीं किया जाकर सही किया। (520-ई; 521-ए,बी)

4. उद्देश्य के संबंध में, इसमें कोई संदेह नहीं है कि मृतक और अपीलकर्ता नंबर 1 के बीच एक दीवानी वाद लंबित था, लेकिन यह इतने भयानक अपराध करने का एक प्रबल उद्देश्य नहीं है। सबसे बुरी स्थिति में आरोपी के खिलाफ प्रबल संदेह बढ जाता है। (520-जी)

5. दोषमुक्ति के खिलाफ अपील में, उच्च न्यायालय यह पता लगाने के लिए सबूतों की पुनः मुल्याकंन करने में सक्षम है कि विचारण

न्यायाधीश ने सबूतों के किसी भी हिस्से का गलत मूल्यांकन किया है या नहीं। हस्तगत प्रकरण में, विचारण न्यायाधीश द्वारा दिए गए साक्ष्य का मूल्यांकन उचित हैं और निकाले गए निष्कर्ष उचित हैं। इसलिए, उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायाधीश के विचार के स्थान पर अपने स्वयं के दृष्टिकोण को प्रतिस्थापित करने के लिए सबूतों की दोबारा मूल्यांकयन करने में गलती की और विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए दोषमुक्ति के फैसले को पलटना बिल्कुल भी उचित नहीं था। 6. जिस गांव में घटना घटी वह गांव डकैती प्रभावित क्षेत्र के अंतर्गत आता है जिस पर एम. पी. (डकैती विहावरण क्षेत्र) अधिनियम, 1981 लागू है। ऐसी परिस्थितियों में, अज्ञात अपराधियों द्वारा कथित अपराध कारित होने की संभावना को पूरी तरह से खारिज नहीं किया जाता है (520-एच; 521-ए; 521-सी,डी)

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकारः सी. आर. एल. ए. 789/2002

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, के सी.आर.एल.ए. नं. 163/1986 में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 11.3.2002 से।

डॉ. टी.एन. सिंह, लाखन सिंह चौहान सी.एम. पटेल और अनिल श्रीवास्तव अपीलकर्ताओं के लिए.

सुश्री विभा दत्ता मखीजा और सुश्री भारती त्यागी प्रतिवादी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय न्यायधीश धर्माधिकारी,जे. द्वारा पारित किया गया :-

उच्च न्यायालय की मध्य प्रदेश खंडपीठ, ग्वालियर ने 11.3.2002 के आक्षेपित निर्णय द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय को पलट दिया और हमारे सामने उपस्थित तीन अपीलकर्ताओं को उन अपराधों के लिए दोषी ठहराया, जिनके लिए उन पर आरोप लगाया गया था और उन्हें आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई और जुर्माना रूपये 10,000 का प्रत्येक को इस निर्देश के साथ लगाया कि जुर्माने का भुगतान न करने पर उन्हें एक वर्ष के लिए आरआई भुगतना होगा।

वर्तमान तीन अपीलकर्ताओं को सह-अभियुक्त पूरन सिंह के साथ विशेष न्यायाधीश, भिंड की अदालत ने दिनांक 06.9.1985 के निर्णय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34, 396, 460, 404, (दंड संहिता (संक्षेप में आईपीसी के लिए) और मप्र की धारा 11/13 (डकैती विहावरण क्षेत्र) अधिनियम, 1981 के तहत उनके द्वारा किए गए अपराधों के लिए दोषमुक्त कर दिया था।

उन पर आरोप था कि 28-29 फरवरी, 1984 की मध्यरात्रि को वे मृतक माता प्रसाद के घर में घुस गये। उन्होंने उसे मार कर घर में लटका दिया और उसकी बेटी मुन्नी देवी की भी हत्या कर दी

तीनों अभियुक्तों एवं चौथे अभियुक्त पूरण सिंह के विरुद्ध गठित अभियोजन का मामला इस प्रकार हैः-

अपराध का उद्देश्य आरोपी भगवान सिंह, उसके पिता दयाराम एक पक्ष और मृतक माता प्रसाद उनके प्रतिद्वंद्वी के बीच दीवानी वाद में लंबित एक दीवानी वाद बताया जाता है। वे सभी ग्राम मुरावली, तहसील लहार, थाना दाबोह जिला भिण्ड में एक-दूसरे के पड़ोस में रहते थे। दीवानी वाद पक्षकारों के घर के बीच चबूतरा तक पहुंच के लिए एक दरवाजा खोलने के संबंध में था। मृतक ने 1986 का एक सिविल मुकदमा संख्या 566ए दायर किया था और 20.10.1983 को आरोपी भगवान सिंह के खिलाफ निषेधाज्ञा प्राप्त की थी, जिसमें भगवान सिंह को वादी के चबूतरे की ओर कोई भी दरवाजा या खिड़की खोलने से रोका गया था।

अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि आरोपी भगवान सिंह ने अन्य सह-अभियुक्तों की मदद से माता प्रसाद को मारने की योजना बनाई। अपनी योजना को पूरा करने के लिए, वे 28-29 फरवरी, 1984 की मध्यरात्रि में मृतक माता प्रसाद के घर में घुस गये और उनकी गर्दन दबाकर हत्या कर दी और घर में दरवाजे के हुक से लटका दिया। उन्होंने उसकी बेटी मुन्नी देवी की भी हत्या कर दी जो घर के अंदर जली हुई अवस्था में मृत पाई गई थी।

अभियुक्तों के खिलाफ अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में मुख्य साक्ष्य कथित बाल चश्मदीद गवाह अरविंद कुमार (पीण्डब्लू-19) की एकमात्र गवाही है जो घटना के समय लगभग छह वर्ष का था और न्यायिक

मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग, लहार श्री डी०के० पालीवाल(पीण्डब्लू-1) द्वारा धारा 164 आपराधिक प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में सी०आर०पी०सी०) के अन्तर्गत दर्ज किया गया।बरी किए गए सह-अभियुक्त पूरन सिंह का कथित न्यायिक स्वीकारोक्ति(पीण्डब्लू-1) है।

अभियोजन पक्ष अन्य पुष्टिकारक साक्ष्य जिस पर विश्वास किया गया है वह कथित साजिश है जिसके संबंध में घटना से पहले और बाद में आरोपियों के बीच बातचीत हुई थी और कहा गया था कि कालका (पीण्डब्लू-10), कमलेश (पीण्डब्लू-12), दीनानाथ (पीण्डब्लू-17) ने इसे सुना था और जिसकी पुष्टि मृत मुन्नी देवी के पति राधेश्याम (पीण्डब्लू-20)द्वारा की गई। अभियोजन पक्ष ने यह भी सबूत पेश किया कि आरोपी की सूचना पर मृतक के घर से संबंधित घरेलू सामान और कीमती सामान आरोपी के कब्जे से बरामद किया गया था।

प्रारम्भ में, हम कह सकते हैं कि एक योजना बनाने और उसके पूरा होने से पहले और बाद में इसके बारे में बात करने के आरोपी के खिलाफ अभियोजन पक्ष द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य, जिसे कथित तौर पर गवाहों द्वारा सुना गया था, पर विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने ही विश्वास नहीं किया है। विचारण न्यायालय ने आरोपियों की कथित जानकारी पर वस्तुओं की कथित बरामदगी के साक्ष्य को भी पूरी तरह से खारिज कर दिया, लेकिन उच्च न्यायालय ने आरोपियों के खिलाफ

पुष्टिकारक साक्ष्य के रूप में कुछ घरेलू वस्तुओं की बरामदगी का उल्लेख किया है, उचित स्तर पर जिसका निस्तारण हमारे निर्णय में किया जायेगा।

उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति करने के फैसले को पलटने और हमारे सामने अपीलकर्ता के रूप में तीन आरोपियों को दोषी ठहराने में मुख्य रूप से बाल गवाह अरविंद कुमार(पीण्डब्लू-19) के चश्मदीद गवाह पर विश्वास किया है। यह माना गया कि न्यायिक स्वीकारोक्ति भले ही वापस ले ली गई हो और अभियुक्तों से मृतक से संबंधित कुछ वस्तुओं की बरामदगी, एकमात्र बाल चश्मदीद गवाह अरविंद कुमार (पीडब्लू-19) की गवाही के पुष्टिकारक साक्ष्य का भाग हैं। इन साक्ष्यों के आधार पर यह माना जाता है कि अभियुक्त के विरुद्ध आरोपित अपराध संदेह से परे साबित हो गया है।

अपीलकर्ताओ/अभियुक्तों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील डॉ. टी० एन० सिंह ने हमें रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों से अवगत कराया और न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा ली गयी प्रस्तुत किया कि बाल गवाह अरविंद कुमार (पीडब्लू-19) के कथित चश्मदीद गवाह और कथित न्यायिक स्वीकारोक्ति (एक्स.पी1) दोनों दिए गए मामले अविश्वसनीय थे और विचारण न्यायालय ने इन्हें सही तरीके से खारिज कर दिया था। उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के फैसले को पलटने और ऐसे कमजोर सबूतों पर आरोपियों को दोषी ठहराने के लिए कोई उचित और ठोस कारण नहीं दिया है। हमने मध्य प्रदेश राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वकील

को भी सुना है जिन्होंने उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के फैसले का समर्थन करने की भरपूर कोशिश की।

चूंकि दोषसिद्धि मुख्य रूप से एकमात्र कथित बाल चश्मदीद गवाह अरविंद कुमार (पीडब्लू-19) के साक्ष्य पर आधारित है, हम पहले उस साक्ष्य पर विचार करेंगे ताकि यह तय किया जा सके कि क्या उच्च न्यायालय का उसके साक्ष्य के बारे में अलग दृष्टिकोण रखना और उस पर विश्वास करना।

यह घटना 28-29 फरवरी, 1984 की मध्यरात्रि को हुई थी। अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि लगभग छह साल की उम्र का चश्मदीद गवाह अरविंद कुमार (पीडब्लू-19)अपने दो छोटे भाइयों के साथ मृतक माता मुन्नी देवी के साथ मृतक माता प्रसाद के घर में सो रहा था। जांच अधिकारी का दावा है कि घटना के अगले दिन अर्थात 01.03.1984 को धारा 161 सीआरपीसी के तहत बाल गवाह का बयान दर्ज किया गया था। अपने बयान में बच्चे ने दावा किया कि उसने आरोपी भगवान सिंह को उसकी मां के चेहरे को पकड़ते हुए और सह-आरोपी लक्ष्मण सिंह और सुल्तान सिंह को उसके साथ मारपीट करते हुए देखा था। उन्होंने यह भी बताया कि आरोपी के साथ दो अन्य व्यक्ति भी मौजूद थे। घटना देखने के बाद वह घबरा गया और वापस सो गया। सुबह जब वह उठा तो देखा कि उसके दादा माता प्रसाद घर के दरवाजे पर मृत अवस्था में लटके हुए थे

और मां जली हुई अवस्था में मृत अवस्था में पड़ी हुई थी। यह भयावह दृश्य देखकर वह फिर से घर के अंदर सो गया। सुबह उसके मामा आज्ञाराम आए और उसे और उसके छोटे भाइयों को आलमपुर गांव ले गए, जहां उसके पिता राधेश्याम (पीडब्लू-20) रहते थे।

मामले की सबसे खास बात यह है कि बच्चे के गवाह के साक्ष्य पर गहरा संदेह है, यह तथ्य है कि हालांकि बच्चे ने 01.03.1984 को सीआरपीसी की धारा 161 के तहत अपने बयान में तीन अपीलकर्ताओं/अभियुक्तों का नाम लिया था, लेकिन नामित आरोपियों को तुरन्त पश्चात गिरफ्तार नहीं किया गया था। गिरफ्तारी ज्ञापन (पीडब्लू-18) के अनुसार उन्हें दिनांक 12.03.1984 को गिरफ्तार किया गया था। यह बहुत अस्वाभाविक है कि यदि बच्चे ने दिनांक 01.03.1984 को सीआरपीसी की धारा 161 के तहत अपने बयान में आरोपी का नाम लिया होता, तो उसके तुरंत बाद आरोपी को गिरफ्तार नहीं किया जा सकता था। उन तीन आरोपियों की गिरफ्तारी में इस देरी के लिए रिकॉर्ड में कोई स्पष्टीकरण नहीं है, जिनका नाम कथित तौर पर बच्चे गवाह ने पुलिस को दिए अपने बयान में दिया था।

बच्चे के मामा आज्ञाराम बाल गवाह अरविंद कुमार (पीडब्लू-19) से मिलने वाले पहले व्यक्ति थे। यदि बच्चे ने घटना देखी होती और आरोपियों को पहचान लिया होता, तो आज्ञाराम पहला व्यक्ति होता, जिसे बच्चे ने

घटना और हमलावरों के नाम बताए होते। अभियोजन पक्ष ने मामले में आज़ाराम को गवाह के रूप में पेश नहीं किया है और उसे गवाह के रूप में पेश नही के लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है। आज़ाराम को गवाह के रूप में पेश न करने के अभियोजन पक्ष की इस चूक को अन्य कारणों के साथण्साथ विचारण न्यायाधीश द्वारा बच्चे के कथनों को खारिज करने में बहुत महत्व दिया गया है। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य की इस महत्वपूर्ण चूक को नजरअंदाज कर दिया है।

बच्चे के पिता और मृत मुन्नी देवी के पति राधेश्याम (पीडब्लू-20), ने अपने बयान में यह नहीं बताया कि घटना के बाद, बच्चे के गवाह अरविंद कुमार (पीडब्लू-19) ने उन्हें हमलावरों के नामों का खुलासा किया था। उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय के पैराग्राफ 26 में राधेश्याम और बाल गवाह के साक्ष्य में इस कमज़ोरी को समझाने का प्रयास किया गया है, जिसमें कहा गया है कि अपने प्रियजनों की हत्या की खबर से राधेश्याम परेशान हो गए होंगे और अपने बच्चे से पूछताछ करने के बजाय, शवों की देखभाल और पुलिस जांच में मदद करने में व्यस्त रहे होंगे।

न्यायालय में बाल गवाह संख्या (पीडब्लू-19) के रूप में पूछताछ की गई। उनका बयान दिनांक 14.02.1985 को दर्ज किया गया था। घटना की तारीख से उसके बयान की तारीख के बीच की अवधि में, आरोपियों को

नाम सहित शामिल करने के लिए बयान देने के लिए उसे प्रशिक्षित करने के लिए पर्याप्त समय था। स्वीकृत रूप से, भले ही बाल गवाह अरविंद कुमार (पीडब्लू-19)के बारे में यह कहा है कि उसने 01.03.1984 को धारा 161 सीआरपीसी के तहत पुलिस को दिए अपने बयान में तीन अपीलकर्ताओं/अभियुक्तों को देखा और उनका नाम लिया था, कोई परीक्षण पहचान परेड आयोजित नहीं की गई थी। यह कहा गया कि आरोपियों को चेहरा ढंककर कोर्ट में पेश किया गया था। इसके बाद न्यायालय के निर्देश पर उन्हें अपना चेहरा उजागर करने के लिए कहा गया। न्यायालय द्वारा बाल गवाह को उन्हें पहचानने के जब कहा तब वे कटघरे में थें। विचारण न्यायालय द्वारा बाल गवाह द्वारा तीनों के कटघर में की गयी पहचान को परीक्षण पहचान के अभाव में महत्व नही दिया गया विचाराधीन न्यायालय ने बच्चे के गवाह के भावभंगिमा को दर्ज किया कि वह गवाही देते समय रुक रहा था और कभी-कभी कहने में गलतियाँ कर रहा था और उससे पूछे गए कुछ सवालों को समझ नहीं पा रहा था। इसलिए, विचारण न्यायाधीश ने माना कि एक बच्चे गवाह की ऐसी अस्थिर गवाही पर भरोसा करना खतरनाक होगा, जिसे घटना की तारीख और उसके बयान की तारीख के बीच की अवधि में सिखाया जा सकता था।

अपील में, उच्च न्यायालय ने उपरोक्त चश्मदीद गवाह की एकमात्र गवाही पर भरोसा किया और बाल गवाह द्वारा पुलिस के सामने तीन

हमलावरों का नाम लेने के बाद परीक्षण पहचान परेड आयोजित नहीं करने सहित ऐसी गंभीर चूक को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय ने डॉक पहचान पर भरोसा करते हुए कहा कि बच्चा गवाह नियमित रूप से अपनी मां के साथ अपने मृत दादा माता प्रसाद से मिलने जाता था और पड़ोस में रहने वाले आरोपी भगवान सिंह और अन्य आरोपी सुल्तान सिंह और लक्ष्मण सिंह जो उसी गांव मुरावली में रहते थे, को घटना के पहले से जानता था। पैराग्राफ 26 से 28 में निहित उच्च न्यायालय के तर्क के प्रासंगिक भाग पर विचार करने के लिए पुनर्विवेचना की आवश्यकता है कि क्या उच्च न्यायालय के फैसले में निहित कारण और निष्कर्ष विचारण न्यायाधीश द्वारा दिए गए बरी के फैसले को उलटने के लिए उचित हैं।

> "26. प्रतिपक्षी आरोपी व्यक्ति की ओर से यह तर्क दिया गया है कि बाल गवाह अरविंद को उसके पिता राधेश्याम द्वारा तुरंत पुलिस के पास नहीं ले जाया गया था और यह और भी आश्चर्यजनक है कि राधेश्याम ने अपने किसी भी बच्चे से घटना के बारे में कोई विवरण नहीं पूछा था। उसने कहा है इस बात की कोई जानकारी नहीं है कि पुलिस ने कब अरविंद कुमार का बयान दर्ज किया था। इसका मतलब है कि अरविंद कुमार मौके पर मौजूद नहीं था हालांकि, हमारी राय में, लगभग छह साल का अरविंद कुमार, मृतक

मुन्नी देवी का सबसे बड़ा बच्चा है, जो घटना के बारे में कुछ गवाही दे सकता है। उसके बाकी छोटे भाई घटना के बारे में जानने के लिए बहुत छोटे हैं और परिणामस्वरूप, घटना के समय वे गहरी नींद में थे। आमतौर पर यह उम्मीद की जाती है कि जब माँ उसके पति से दूर होती है तो छोटे बच्चे अपनी माँ के साथ होंगे और उसके पिता मृतक माता प्रसाद से मिलने के लिए गई हो। घटना के तुरंत बाद मौके पर गए गवाहों ने भी मौके पर बच्चों की मौजूदगी की पुष्टि की। जहां तक बच्चों से उनके पिता द्वारा तुरंत पूछताछ नहीं किए जाने का कारण है सच तो यह है कि घटना की खबर से पिता ज्यादा परेशान नहीं थे और तुरंत घटनास्थल पर पहुंचे और वहां पुलिस की जांच में मदद कर रहे थे। यह भी ध्यान देने वाली बात है कि उन्हें शवों को पोस्टमार्टम के लिए भेजने और फिर उनके अंतिम संस्कार की व्यवस्था करने की भी देखभाल करनी पड़ती थी। इस सब ने उन्हें इतना व्यस्त कर दिया है कि उनसे उम्मीद की जाती है कि वे अपना ध्यान उन बच्चों से पूछताछ करने की ओर लगाएंगे, जिन्हें जल्दबाजी में गांव आलमपुर में उनके आवास पर छोड़ दिया गया था।

27. गौर करने वाली बात यह है कि सुबह-सुबह मौके पर पहुंचे प्रत्यक्षदर्शियों ने बच्चों को सोते हुए पाया और ऐसी स्थिति में सभी को लगा कि शायद उन्हें घटना की जानकारी नहीं है। यह सामान्य ज्ञान की बात है कि जब बच्चे अपनी माँ को इतनी कम उम्र में खो देते हैं तो उन्हें हमेशा शव से अलग रखा जाता है। यदि बच्चों को घटनास्थल से दूर रखा गया होता तो पुलिस के गवाहों द्वारा उनसे तुरंत पूछताछ नहीं की गई होती। इसी तरह, जब बच्चों के पिता शवों के अंतिम संस्कार आदि में व्यस्त थे, तो उससे यह उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि उसे यह पता हो कि उनमें से एक बच्चे से पुलिस कब पूछताछ करेगी। ऐसी स्थिति में, हमारी राय में, सिर्फ इसी आधार पर बाल गवाह अरविंद कुमार की गवाही पर अविश्वास नहीं किया जा सकता। बाल गवाह अरविंद कुमार के साक्ष्यों को देखने के बाद, हमारी राय है कि अदालत में परीक्षण के दौरान उसका आचरण और व्यवहार काफी स्वाभाविक और प्रासंगिक है। इन परिस्थितियों में उनके साक्ष्य की विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा उचित परिप्रेक्ष्य में विवेचना नहीं की गई, जिसे सह-अभियुक्त पूरन सिंह के स्वीकारोक्ति के बयान से भौतिक विवरणों में समर्थन मिलता है।

28. प्रतिपक्षी आरोपी व्यक्ति के विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया है कि आरोपी व्यक्ति बाल गवाह के जानकार नही थे और न ही इस उद्देश्य के लिए कोई पहचान परेड आयोजित की गई थी। इन परिस्थितियों में, अदालत में कटघरे की पहचान पर्याप्त नहीं है। हालाँकि, हमारी राय है कि बचाव पक्ष द्वारा बाल गवाह से पहचान के बिंदु पर बिल्कुल भी जिरह नहीं की गई कि आरोपी व्यक्ति को वह पहले से जानता है या नहीं। चूँकि यह विवादित नहीं है कि आरोपी भगवान सिंह मृतक माता प्रसाद का पड़ोसी है। इसी तरह आरोपी सुल्तान सिंह और लक्ष्मण भी एक ही गांव यानी मुरावली के रहने वाले हैं। ऐसी स्थिति में, यह माना जाना चाहिए कि ये आरोपी व्यक्ति को बाल गवाह पहले से जानते हैं और इस प्रकार, अदालत कक्ष में गवाह द्वारा कटघरे की पहचान में कुछ भी गलत नहीं है। इन आरोपी व्यक्तियों का नाम बाल गवाह द्वारा अपने पुलिस केस डायरी बयान(एक्स.डी/4) में भी किया गया है और अपने पुलिस केस डायरी बयान में आरोपी व्यक्तियों के नामों का उल्लेख करने के संबंध में गवाह से कोई जिरह नहीं की गई है। हालांकि, पुलिस केस डायरी के बयान में मृतक मुन्नी देवी को आग लगाने की बात का उल्लेख नहीं किया गया है,

लेकिन यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि उसके मुंह को भगवान सिंह ने पकड़ लिया था और लक्ष्मण और सुल्तान सिंह उसके साथ मारपीट कर रहे थे। बाल गवाह होते हुए उसके बयान में इस तरह की छोटी-मोटी विसंगतियां स्वाभाविक हैं और इन परिस्थितियों में, उसका बयान स्पष्ट रूप से अपराध में आरोपी व्यक्तियों की संलिप्तता के बारे में विश्वास पैदा करता है।"

हमारी सुविचारित राय में, अभियोजन पक्ष की ओर से परीक्षण पहचान परेड नहीं करने और आज़ाराम की जांच नहीं करने के कारण, जिससे कथित तौर पर बच्चा पहली बार घटना के बाद मिला था, बच्चे के साक्ष्य गंभीर कमज़ोरी से ग्रस्त हैं। विचारण न्यायाधीश द्वारा अन्य परिस्थितियों पर भी चर्चा की गई है, जो दोषसिद्धि को आधार बनाने के लिए बच्चे के गवाह के साक्ष्य को अत्यधिक अविश्वसनीय बनाती है।

विधि बच्चे को एक सक्षम गवाह के रूप में मान्यता देता है, लेकिन एक बच्चा, विशेष रूप से छह साल की उम्र में, जो समझ की अपरिपक्वता के कारण घटना की प्रकृति के बारे में उचित राय बनाने में असमर्थ है, उसे अदालत द्वारा सक्षम गवाह नहीं माना जा सकता है, जिसकी एकमात्र गवाही पर अन्य पुष्ट साक्ष्यों के बिना भी भरोसा किया जा सकता है। बच्चे के साक्ष्य का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना आवश्यक है क्योंकि वह

(पीडब्लू-19)शिक्षण का आसान शिकार है। इसलिए, अदालत हमेशा उसकी गवाही के लिए अन्य सबूतों से पर्याप्त पुष्टि को देखती है। (पंछी और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य देखेंः (1998) 7 एससीसी 177,

हमारे सामने आए मामले में, विचारण न्यायाधीश ने बच्चे के आचरण को दर्ज किया है। बच्चा अपनी गवाही के दौरान हिचकिचा रहा था। छह साल की उम्र के बच्चे से, बयान में पूर्ण स्थिरता की उम्मीद नहीं की जा सकती है, लेकिन अगर ऐसा प्रतीत होता है कि उसे पढ़ाए जाने की संभावना है तो अदालत को उसके साक्ष्य पर भरोसा करने में सावधानी बरतनी चाहिए। हम ऊपर पहले ही बता चुके हैं कि बच्चे के आज़ाराम जो बच्चे के मामा है, जो घटना के बाद सबसे पहले उससे मिले थे और उसे उसके छोटे भाइयों के साथ उसके पिता के गांव ले गए थे, को अभियोजन पक्ष ने अदालत में गवाह के रूप में पेश नहीं किया है। सबसे अधिक संभावना यह थी कि यदि बच्चे ने घटना देखी होती और तीनों आरोपियों को पहचान लिया होता, तो उसने यह बात आज़ाराम को नहीं बताई होती, क्योंकि आज़ाराम ने स्वाभाविक रूप से इसके बारे में पूछताछ की होती। अभियोजन पक्ष द्वारा गवाह के रूप में पेश किये गये उसके पिता राधेश्याम का आचरण भी अस्वाभाविक है कि पुलिस द्वारा बच्चे का बयान दर्ज करने से पहले उन्होंने बच्चे से कोई पूछताछ नहीं की।

हमें मध्य प्रदेश राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वकील की दलीलों

में इस बाबत कुछ बल मिलता है कि बच्चे और उसके दो छोटे भाइयों की उम्र को देखते हुए, यह सबसे अधिक संभावना है कि वे मां के साथ थे और जब वह (अपने मृत पिता माता प्रसाद के साथ रहने के लिए) चली गई थी तो उसके साथ सो रहे थे।। लेकिन जब घर के बुजुर्गों पर हमला किया गया और उन्हें मार डाला गया तो बच्चों के गहरी नींद में होने की दूसरी संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता क्योंकि घटना आधी रात को होने की बात कही जा रही है। घटना के समय घर में बच्चों की उपस्थिति मात्र अभियोजन पक्ष के मामले के लिए कोई आश्वासन नहीं है कि सबसे बड़ा बच्चा शोर.शराबा सुनकर उठ गया था और उसने न केवल घटना देखी थी बल्कि आरोपी की पहचान भी की थी। बाल मनोविज्ञान को ध्यान में रखते हुए छह साल का बच्चा अपनी मां पर हमला होते देखकर चिल्ला उठताय लेकिन उसका कहना है कि वह चुपचाप वापस सो गये। यह एक बच्चे के लिए भी सबसे अस्वाभाविक है कि अपनी माँ को ज्ञात व्यक्तियों द्वारा हमला करते देखने के बाद वह फिर से सो जाता है और सुबह देर से उठता है जब उसके मामा आज्ञाराम उसे और उसके छोटे भाइयों को उसके पिता के गाँव आलमपुर ले जाने के लिए आते हैं।

बच्चे के गवाह की एकमात्र गवाही पर भरोसा करना खतरनाक है जबकि यह घटना घटित होने के तुरंत बाद उपलब्ध नहीं हुई है और इससे पहले कि उसे सिखाने पढाने की कोई संभावना हो। देखेंः असम राज्य

बनाम माफ़िज़ुद्दीन अहमद (1983) 2 एससीसी 14 के पैरा 14 15 । उस मामले में बाल गवाह के साक्ष्य की विवेचना की गई है और अविश्वसनीय माना गया :

> "14. अन्य प्रत्यक्ष साक्ष्य पीडब्लू 7, मृतक के बेटे, 7 साल के लड़के का बयान है। उच्च न्यायालय ने अपने फैसले में यह पाया किः.
>
> ... एक बच्चे के गवाह का साक्ष्य हमेशा खतरनाक होता है जब तक कि यह घटना के तुरंत बाद और सिखाने और पढाने की कोई संभावना होने से पहले उपलब्ध न हो।
>
> 15. पीडब्लू.7 के बयान को देखने मात्र से हमें यह विश्वास हो जाता है कि वह पूरे समय ढुलमुल रहा था और उसने गवाही दे दी है कि उसे या तो उसके नाना या उसके अपने चाचा द्वारा गवाही देने के लिए कहा गया था। यह सच है कि हम इस गवाह के बयान में बहुत अधिक स्थिरता की उम्मीद नहीं कर सकते, जो केवल 7 साल का लड़का था। लेकिन उसके बयान के भाव से यह स्पष्ट है कि वह एक स्वतंत्र एजेंट नहीं था और उसे सभी चरणों में किसी न किसी के द्वारा प्रशिक्षित किया गया था।"

हमने इस तथ्य पर भी ध्यान दिया है कि सीआरपीसी की धारा 161 के तहत पुलिस को दिए गए अपने बयान में बच्चे गवाह द्वारा तीन आरोपियों की कथित संलिप्तता के बाद भी, कोई परीक्षण पहचान परेड आयोजित नहीं की गई थी। ऐसी परिस्थितियों में, हमारी राय में, अदालत में बच्चे द्वारा आरोपी की कटघरे में पहचान मात्र को मात्र विश्वसनीय पहचान के रूप में निश्चित रूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता है। (देखें जपल सिंह बनाम पंजाब राज्य, (1996) 4 अपराध 74 (एससी))

पहचान परेड न कराने की चूक पर उच्च न्याायालय ने कहा है कि आरोपी भगवान सिंह मृतक माता प्रसाद के पड़ोस में रहता था और अन्य दो आरोपी भी उसी गांव के थे। इसलिए, जब आरोपी पहले से ही बच्चे को जानता था तो अभियोजन पक्ष के लिए परीक्षण पहचान परेड आयोजित करना आवश्यक नहीं था।

हमारी राय में, परीक्षण पहचान परेड आयोजित न करने की इतनी महत्वपूर्ण चूक को दरकिनार करने का जो कारण बताया गया है, वह असंबद्ध है। घटना के समय बच्चे की उम्र करीब छह साल थी। वह अपने पिता और मां के साथ आलमपुर में रहता था। कुछ गवाहों की गवाही में बताया गया है कि वह अपनी मां और छोटे भाइयों के साथ नाना माता प्रसाद के पास रहने के लिए मुरावली आता-जाता रहता था। उसकी उम्र और बच्चे की समझ को देखते हुए, भले ही उसने पड़ोस में रहने वाले

आरोपी भगवान सिंह को पहचान लिया हो, लेकिन यह बहुत कम संभावना थी कि वह अन्य दो आरोपियों को जानता होगा जो उसी गांव मुरावली के निवासी थे। उच्च न्यायालय का यह कहना पूरी तरह से सही नहीं है कि बच्चा पहले से ही तीन आरोपियों से परिचित था और अभियोजन पक्ष के लिए परीक्षण पहचान परेड आयोजित करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। इसलिए, हमारी राय में, उच्च न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा ली गई गवाही के विपरीत बाल गवाह की गवाही पर विचार करना और आरोपी को दोषी ठहराने के लिए उस पर विश्वास करना पूरी तरह से अनुचित था।

उच्च न्यायालय ने वर्तमान अपीलकर्ताओं/अभियुक्तों के खिलाफ आरोपी पूरन सिंह द्वारा की गई न्यायिक स्वीकारोक्ति पर बच्चे अरविंद कुमार (पीडब्लू-19) के चश्मदीद गवाह के पुष्टिकारक साक्ष्य के रूप में विश्वास किया है।

दोषमुक्त किए गए आरोपी पूरन सिंह द्वारा न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष दिए गए न्यायिक स्वीकारोक्ति के संबंध में, कई चौंकाने वाली विशेषताएं हैं जो अतिरिक्त न्यायिक स्वीकारोक्ति की स्वाभाविकता पर बड़ा संदेह पैदा करती है, जिसे धारा 313 सीआरपीसी के तहत अपनी परीक्षा के दौरान आरोपी पूरन सिंह द्वारा लिखित रूप में वापस ले लिया गया था। अभियुक्त पूरन सिंह को भी सह-अभियुक्तों के साथ दिनांक 12.03.1984 को गिराफ्तारी ज्ञापन (एक्स.पी.18)के तहत गिरफ्तार किया गया था।

09.04.1984 को न्यायिक मजिस्ट्रेट (पीडब्लू-1) द्वारा उनकी अतिरिक्त न्यायिक स्वीकारोक्ति दर्ज की गई थी जब उन्हें पुलिस हिरासत में उनके सामने हथकड़ी लगाकर पेश किया गया था। यह तथ्य कि पूरन सिंह को 09.04.1984 को पुलिस हिरासत में हथकड़ी लगाकर पेश किया गया था, को पीडब्लू-1 के तौर पर न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा जिरह में दिए गए बयान में स्वीकार किया गया है। यदि पूरन पुलिस हिरासत में था, तो सीआरपीसी की धारा 164 की आवश्यकता के अनुसार मजिस्ट्रेट को यह सुनिश्चित करना ध्यान में रखना चाहिए था कि पुलिस द्वारा उसके खिलाफ अपराध स्वीकार करने के लिए किसी तीसरे डिग्री के तरीकों का इस्तेमाल नहीं किया गया था। पीडब्लू-1 के रूप में गवाही में मजिस्ट्रेट का कहना है कि उन्होंने आरोपी पूरन सिंह से पूछताछ की और बाद में पुष्टि की कि वह बिना किसी दबाव के स्वेच्छा से बयान दे रहा था। लेकिन स्वीकारोक्ति के रिकॉर्ड (एक्स.पी1) से यह नहीं पता चलता है कि (पीडब्लू-1)आरोपी पूरन सिंह से कोई विशेष सवाल पूछे गए थे कि क्या जांच एजेंसी द्वारा उस पर कोई शारीरिक या मानसिक दबाव डाला गया था। न्यायिक मजिस्ट्रेट को जो पहली सावधानी बरतनी होती है, वह अभियोजन एजेंसी द्वारा जबरन स्वीकारोक्ति लेने से रोकना है। (देखेः. यू पी राज्य बनाम सिंघारा सिंह, एआईआर (1964) एससी 358) । इस न्यायालय ने शिवप्पा बनाम कर्नाटक राज्य (1995) 2 एससीसी 76 के मामले में यह भी माना है कि धारा 164 सीआरपीसी के प्रावधानों का न केवल प्रारूप में, बल्कि सार रूप

में अनुपालन किया जाना चाहिए। स्वीकारोक्ति बयान दर्ज करने के लिए आगे बढ़ने से पहले, आरोपी से यह पूछताछ की जानी चाहिए कि उसे किस हिरासत से लाया गया था और ऐसी हिरासत में उसके साथ क्या व्यवहार किया गया था ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि अभियोजन में रुचि रखने वाले स्रोत से होने वाला बाहरी प्रभाव के होने के संदेह की कोई गुंजाइस नही है। ।

यह भी निर्धारित किया गया है कि मजिस्ट्रेट को विशेष रूप से अभियुक्त से पूछना चाहिए कि वह ऐसा बयान क्यों देना चाहता है जो निश्चित रूप से मुकदमे में उसके हित के खिलाफ होगा। उसे चिंतन के लिए पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए। यदि वह स्वीकारोक्ति बयान देने से इनकार करता है तो उसे किसी भी प्रकार की आशंका वाली यातना या पुलिस के दबाव से सुरक्षा का आश्वासन दिया जाना चाहिए। दुर्भाग्य से, इस मामले में, न्यायिक मजिस्ट्रेट (पीडब्लू-1) के साक्ष्य यह दर्शित नहीं होता है कि न्यायिक स्वीकारोक्ति दर्ज करने से पहले ऐसी कोई सावधानी बरती गई थी।

स्वीकारोक्ति को प्रश्न और उत्तर के प्रारूप में भी दर्ज नहीं किया गया है, जैसा कि आपराधिक अदालत के नियमों में दर्शाया गया है। 28.07.1985 को बरी किए गए आरोपी पूरन सिंह द्वारा विचारण न्यायाधीश के समक्ष अपनी स्वीकरोक्ति वापस ले ली गयी थी, जहां उसने खुलासा

किया था कि उसे यह कहकर न्यायिक बयान के लिए पेश किया गया था कि वह एक सरकारी गवाह के रूप में अभियोजन पक्ष का गवाह होगा। उसने यह भी कहा गया है कि पुलिस ने उससे जेल में मुलाकात की थी और एक बयान पर उनके हस्ताक्षर लिए गए थे। ऐसा प्रतीत होता है कि आरोपी पूरन सिंह पुलिस हिरासत में था जब उसे न्यायिक स्वीकारोक्ति दर्ज करने के लिए हथकड़ी लगाकर पेश किया गया था। न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अपने बयान में यह भी स्वीकार किया कि उसे पुलिस थाना दबोह के माध्यम से पुलिस द्वारा पेश किया गया था और उसका बयान दर्ज करने के बाद उसे वापस पुलिस की हिरासत में दे दिया गया था। इसलिए, इस बात की पूरी संभावना थी कि अभियुक्त पूरन सिंह पर इस आश्वासन पर न्यायिक स्वीकारोक्ति देने के लिए शारीरिक और मानसिक रूप से दबाव डाला गया होगा कि उसे एक सरकारी गवाह के रूप में अभियोजन पक्ष का गवाह बनाया जाएगा। उन्होंने मुकदमे के दौरान 28.07.1985 को अदालत के समक्ष अपनी स्वीकारोक्ति वापस ले ली और सीआरपीसी की धारा 313 के अन्तर्गत एक आरोपी के रूप में परीक्षित होने के बाद परीक्षण में 05.08.1985 को न्यायिक स्वीकारोक्ति को वापस लेने के लिए लिखित रूप में एक बयान दिया। सीआरपीसी की धारा 313 के तहत अपने लिखित बयान में उन्होंने कहा कि झूठी स्वीकारोक्ति देने के लिए सहमत होने के लिए पुलिस ने उन्हें शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया और धमकाया।

यह माना गया है कि स्वीकारोक्ति से तुरंत पहले आरोपी पूरन सिंह की पुलिस हिरासत थी और यह स्वीकारोक्ति को अनैच्छिक के रूप में चिह्नित करने के लिए पर्याप्त है। इसलिए अविश्वसनीय है स्वेच्छा से नहीं दी गयी गयी। न्यायिक स्वीकारोक्ति बयान तब और अधिक अविश्वसनीय हो जाता है जब ऐसी स्वीकारोक्ति को वापस ले लिया जाता है। इस तरह की न्यायिक स्वीकारोक्ति पर विश्वास करना या यहां तक कि इसे मामले में पुष्टि करने वाले साक्ष्य के भाग के रूप में मानना भी सुरक्षित नहीं है। जब कोई न्यायिक स्वीकारोक्ति स्वैच्छिक नहीं पाई जाती है और इससे भी अधिक जब इसे वापस ले लिया जाता है, तो अन्य विश्वसनीय सबूतों के अभाव में, ऐसे वापस लिए गए न्यायिक स्वीकारोक्ति के आधार पर दोषसिद्धि नहीं की जा सकती है। (देखें शंकरिया बनाम राजस्थान राज्य, (1978) 3 एससीसी 435 पैरा 23)

हम खुद को विचारण न्यायाधीश के साथ सहमत पाते हैं कि न तो बाल गवाह की एकमात्र गवाही और न ही अतिरिक्त न्यायिक स्वीकारोक्ति निर्णायक रूप से तीनों आरोपी की संलिप्तता और अपराध को साबित करती है। इन परिस्थितियों मेंए आरोपी द्वारा दी गई कथित जानकारी पर मृतक के कुछ सामानों की बरामदगी के सबूत का सवाल है, ऐसी साक्ष्य अपने आप में आरोपी की सजा को बनाए रखने के लिए बहुत कमजोर साक्ष्य हैं। विचारण न्यायाधीश ने माना है कि मेमोरेंडम (एक्स.पी13)के तहत एक

बोतल की बरामदगी जो कि चोरी होने के लिए बहुत सामान्य वस्तु है और मृतक के घर से चश्मे के साथ धार्मिक पुस्तक 'विश्राम सागर' कम मूल्य की वस्तुएं थीं जिन्हें कोई आरोपी अपराध करने के बाद ले जायेंगे।

जहां तक उद्देश्य का प्रश्न है, इसमें कोई शक नहीं कि मृतक माता प्रसाद और आरोपी भगवान सिंह के बीच सिविल कोर्ट में एक सिविल वाद लंबित था, लेकिन इसे इतना भयानक अपराध करने के लिए पर्याप्त मजबूत उद्देश्य नहीं कहा जा सकता। कम से कम यह आरोपी के खिलाफ मजबूत संदेह पैदा करता है।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि भिंड जिले का ग्राम मुरावली डकैती प्रभावित क्षेत्र में आता है, जिस पर एम. पी. (डकैती विहावरण क्षेत्र) अधिनियम, 1981 लागू है। ऐसी परिस्थितियों में, अज्ञात अपराधियों द्वारा कथित अपराध को अंजाम देने की संभावना से पूरी तरह इंकार नहीं किया जा सकता है।

हमने यह भी पाया कि इस मामले में, अभियोजन पक्ष ने अपीलकर्ताओं को अपराध में शामिल करने की कोशिश की है और हत्या की योजना के बारे में गवाहों द्वारा सुन लेने और योजना के पूरा होने के बाद इसके बारे में खुलेआम चर्चा करने के झूठे सबूत गढ़कर अपना काम पूरा कर लिया है। उक्त साक्ष्य पर दोनों अदालतों द्वारा उचित रूप से विश्वास नहीं किया गया। इसी प्रकार मृतक से संबंधित वस्तुओं की बरामदगी का

साक्ष्य भी आरोपियों के खिलाफ कुछ कृत्रिम साक्ष्य गढ़ने का प्रयास है।

उपरोक्त सभी कारणों से हमारा निष्कर्ष यह है कि विचारण न्यायाधीश द्वारा दिए गए बरी करने के फैसले को पलटना उच्च न्यायालय के लिए बिल्कुल भी उचित नहीं था। बरी किए जाने के खिलाफ अपील में, उच्च न्यायालय यह पता लगाने के लिए सबूतों की दोबारा विवेचना करने में सक्षम है कि विचारण न्यायाधीश ने सबूतों के किसी हिस्से का गलत मूल्यांकन किया है या नहीं। यहां विचारण न्यायाधीश द्वारा किए गए सबूतों की विवेचना उचित है और निकाले गए निष्कर्ष तर्कसंगत हैं। इसलिए, उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायाधीश के दृष्टिकोण के स्थान पर अपने स्वयं के दृष्टिकोण को प्रतिस्थापित करने के लिए साक्ष्य की पुनः विवेचना करने में गलती की।

परिणामस्वरूप, हम इस अपील को स्वीकार करते हैं। उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 11.03.2002 को पारित दोषसिद्धि और सजा के आक्षेपित फैसले के अपास्त किया जाता है और विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 06.09.1985 के पारित दोषमुक्त करने के फैसले को बरकरार रखा गया है। अपीलकर्ताओं को उनकी सजा के बाद फिर से गिरफ्तार कर लिया गया है और वे सजा भुगत रहे हैं। उनके दोषमुक्त होने के परिणामस्वरूप, उन्हें तुरंत रिहा कर दिया जाएगा यदि किसी अन्य आपराधिक मामले में उनकी आवश्यकता नहीं है।

अपील स्वीकृत।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी स्वाति शर्मा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।